जैव उद्‌विकास का सिद्धान्त
(THEORY OF BIO-EVOLUTION)

लेमार्कवाद (Lemarckism)—फ्रांसीसी वैज्ञानिक सर जीन बैपटिस्ट लेमार्क (1774-1829 ई.) (Sir Jean Baptiste Lemarck) **को जैव उद्‌विकास सिद्धान्त का जनक माना जाता है।** 1809 ई. में लेमार्क ने **फिलास्फीक-जूलोजिक** (Philosophic Zoologic) नामक अपना शोध-ग्रन्थ प्रकाशित कराया। इसमें उसने अपना जैव उद्‌विकास सिद्धान्त प्रतिपादित करते हुए बताया कि—

(1) सभी जीवों व उनके अंगों में विद्यमान आन्तरिक बल या जीवन शक्ति के कारण सदैव वृद्धि होती रहती है।

(2) जीवों के शरीर में नये अंगों का विकास उनमें अनुभव होने वाली नई आवश्यकताओं एवं नई दिशा में किये गये प्रयासों के फलस्वरूप होता है।

(3) किसी अंग का नियमित उपयोग किये जाने पर वह अधिक विकसित हो जाता है एवं यदि किसी अंग का उपयोग न किया जाये तो वह धीरे-धीरे अपघटित हो जाता है।

(4) किसी जीव द्वारा उसके जीवनकाल में उपार्जित रूपान्तरण (Metamorphosis) उसकी आने वाली पीढ़ी में वंशानुगत हो जाते हैं। इसीलिये कालान्तर में जीवों में स्थायी परिवर्तन स्थापित हो जाते हैं।

(5) वातावरण, मृद, ताप एवं भोजन में होने वाले परिवर्तन जीवों एवं पेड़-पौधों को प्रभावित करते हैं।

डार्विनवाद (Darwinism)—इंग्लैण्ड के वैज्ञानिक चार्ल्स डार्विन (1809-1882 ई.) ने 1859 ई. में अपनी पुस्तक **प्रकृतिवरण द्वारा जाति का प्रादुर्भाव** (Origin of Species through Natural Selection) द्वारा जैव उद्विकास का सिद्धान्त (Theory of evolution) प्रतिपादित किया। **डार्विन** के अनुसार, "जो जीव अपने आपको प्रकृति के अनुकूल बनाते हैं, जीवित रहते हैं तथा इसके विपरीत जो जीव अपने आपको प्रकृति के अनुकूल नहीं बना पाते, वे कुछ समय बाद नष्ट हो जाते हैं। अत: कमजोर जीवों को नष्ट कर प्रकृति द्वारा एक प्रकार की छँटनी हुआ करती है।" **डार्विन का यह सिद्धान्त प्रकृतिवरणवाद** (Theory of Natural Selection) कहलाता है।